लक्ष्मीनारायण सुधांशु

लक्ष्मीनारायण सुधांशु का जन्म 18 जनवरी 1907 ई० में बिहार प्रांत के पूर्णिया जिला के चंदवा-रूपसपुर गाँव में हुआ था । उनकी प्रारंभिक शिक्षा गाँव और शहर दोनों में हुई । उन्होंने काशी हिंदू विश्वविद्यालय से हिंदी भाषा और साहित्य में एम० ए० किया । वे छात्र जीवन से ही राजनीति में गहरी रुचि लेने लगे थे । आजादी की लड़ाई में उन्होंने सक्रिय भागीदारी निभाई । 1942 के आंदोलन में वे जेल गए और निर्मम यातनाएँ सहीं ।

लक्ष्मीनारायण सुधांशु का साहित्यिक जीवन एक कथाकार के रूप में छात्रावास से ही आरंभ हो गया था । 'भ्रातृप्रेम' नामक उनका एक उपन्यास 1926 में तथा उनके दो कहानी संकलन 'गुलाब की कलियाँ' और 'रसरंग' क्रमशः 1928 और 1929 ई० में प्रकाशित हो चुके थे । परंतु कथाकार के रूप में उनका कोई खास स्थान नहीं बन पाया । साहित्यिक क्षेत्र में उनकी विशेष प्रसिद्धि एक सुधी समीक्षक के रूप में है । 'काव्य में अभिव्यंजनावाद' तथा 'जीवन के तत्त्व और काव्य के सिद्धांत' उनके प्रसिद्ध ग्रंथ हैं, जिनमें उन्होंने मनोविज्ञान, सौंदर्यशास्त्र तथा प्राचीन भारतीय काव्यशास्त्र का समन्वय कर अपनी एक अलग आलोचना पद्धति विकसित की । सुधांशु जी समर्थ पत्रकार और उच्चकोटि के संस्मरण लेखक भी थे । उन्होंने 'अवंतिका' जैसी मशहूर पत्रिका का संपादन किया था । विशिष्ट साहित्यकारों तथा राजनेताओं से संबद्ध उनके संस्मरणों का संग्रह 'व्यक्तित्व की झाँकियाँ' 1971 ई० में प्रकाशित हुआ । 'वियोग' उनका प्रसिद्ध गद्यकाव्य है जिसकी रचना उन्होंने अपनी पहली पत्नी के आकस्मिक निधन पर की थी । साहित्य रचना के अतिरिक्त अनेक प्रांतीय एवं अखिल भारतीय स्तर की साहित्यिक संस्थाओं से संबद्ध रहकर उन्होंने हिंदी की यथेष्ट सेवा की । बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् के जन्मदाताओं में उनकी गणना होती है और उसके संचालक मंडल के आजीवन सदस्य रहे थे । राजनीति के क्षेत्र में भी सुधांशु जी समान रूप से सक्रिय थे । वे बिहार विधान सभा के सदस्य और सभापति तथा अखिल भारतीय काँग्रेस समिति के सदस्य थे । उन्होंने कई शिक्षण और कला संस्थानों की स्थापना की । वे एक साथ साहित्यकार, राजनीतिज्ञ और सामाजिक कार्यकर्ता थे ।

प्रस्तुत निबंध में सुधांशु जी ने ग्राम-गीत के मर्म का उद्घाटन करते हुए काव्य और जीवन में उसके महत्त्व का निरूपण किया है । ग्राम-गीत का उद्भव और उसकी प्रकृति का अनुसंधान करते हुए उन्होंने प्रतिपादित किया है कि जीवन की शुद्धता और भावों की सरलता का जितना मार्मिक वर्णन ग्राम-गीतों में मिलता है, उतना परवर्तीकला-गीतों में नहीं ।

ग्राम-गीत का मर्म

किसी देश के काव्य का उद्‌भव साधारणत: वहाँ की दंतकथाओं या ग्राम-गीतों से होता है । उनके उत्तरोत्तर कलात्मक विकास में मानव-जीवन के महत्त्व की संहृति तथा उसकी विविधता का आलोचन रहता है । सामाजिक जीवन और काव्य, दोनों को मिलाकर देखने से यह पता चलता है कि समाज की धारणाओं के मध्य में जीवन का प्रवाह किस दिशा में, कितनी दूर तक, जा सका है, परिस्थिति की परवशता के कारण जीवन किस सीमा तक पंगु बना है और कहाँ तक उसने परिस्थिति तथा समाज की रूढ़ियों पर विजय पाई है । ग्राम-गीतों में मानव-जीवन के उन प्राथमिक चित्रों के दर्शन होते हैं, जिनमें मनुष्य साधारणत: अपनी लालसा, वासना, प्रेम, घृणा, उल्लास, विषाद को समाज की मान्य धारणाओं से ऊपर नहीं उठा सका है और अपनी हृदयगत भावनाओं को प्रकट करने में उसने कृत्रिम शिष्टाचार का प्रतिबंध भी नहीं माना है । उनमें सर्वत्र रूढ़िगत जीवन ही नहीं है, प्रत्युत कहीं-कहीं प्रेम, वीरता, क्रोध कर्त्तव्य का भी बहुत ही रमणीय, बाह्य तथा अंतर्विरोध दिखाया गया है । जीवन की शुद्धता और भावों की सरलता का जितना मार्मिक वर्णन ग्राम-गीतों में मिलता है, उतना परवर्ती कला-गीतों में नहीं ।

जीवन का आरंभ जैसे शैशव है, वैसे ही कला-गीत का ग्राम-गीत है । ग्राम-गीत संभवत: वह जातीय आशु कवित्व है, जो कर्म या क्रीड़ा के ताल पर रचा गया है । गीत का उपयोग जीवन के महत्त्वपूर्ण समाधान के अतिरिक्त साधारण मनोरंजन भी है, ऐसा कहना अनुपयुक्त न होगा । मनोरंजन के विविध रूप और विधियाँ हैं । स्त्री-प्रकृति में गार्हस्थ्य कर्म-विधान की जो स्वाभाविक प्रेरणा है, उससे गीतों की रचना का अटूट संबंध है । चक्की पीसते समय, धान कूटते समय, चर्खा कातते समय, अपने शरीर-श्रम को हल्का करने के लिए स्त्रियाँ गीत गाती हैं । उस समय उनका अभिप्राय साधारणत: यही रहता है कि परिश्रम के कारण जो थकावट आई रहती है, उससे ध्यान हटाकर अन्यथा मनोरंजन में चित्त संलग्न किया जा सके । इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे गीत भी हैं, जो भाव की उमंग में गाए गए हैं । जन्म, मुंडन, यज्ञोपवीत, विवाह, पर्व-त्योहार आदि के अवसर पर जो गीत गाए जाते हैं, उनमें उल्लास और उमंग की ही प्रधानता रहती है । उनके गीतों का मुख्य विषय पारिवारिक जीवन है । प्रेम, विवाह तथा पतोहू और सास-ससुर के बर्ताव, माँ, भाई, बहन का स्नेह आदि बातें ही ज्यादातर गीतों में पाई जाती हैं । स्त्री-प्रकृति का अनुकरण पुरुषों ने भी किया । हल जोतने, नाव खेने, पालकी ढोने आदि कामों के समय गाए जाने लायक गीत पुरुषों ने भी बनाए । किंतु सब मिलाकर ग्राम-गीतों की प्रकृति स्त्रैण ही रही, पुरुषत्व का आक्रमण उन

पर नहीं किया जा सका । स्त्रियों ने जहाँ कोमल भावों की ही अभिव्यक्ति की, वहाँ पुरुषों ने अवश्य ही अपने संस्कारवश प्रेम को प्राप्त करने के लिए युद्ध-घोषणा की । इस प्रकार मनुष्य की दो सनातन प्रवृत्तियों - प्रेम और युद्ध - का वर्णन भी ग्राम-गीतों में मिलता है । तत्त्वत: ग्राम-गीत हृदय की वाणी है, मस्तिष्क की ध्वनि नहीं । इनकी उद्‌भावना व्यक्तिगत जीवन के उल्लास-विषाद को लेकर भले ही हुई हो, किंतु मानव-जातीयता में उनकी सारी वैयक्तिक विशेषता अंतर्निहित हो गई है । उनकी अपूर्वता इसी बात में है कि वे व्यक्ति को साथ लेकर भी उसको, प्रधान न रख, उपलक्ष्य बनाकर भावों की स्वाभाविक मार्मिकता के साथ अग्रसर हुए हैं ।

कला-गीत के अंतर्गत मुक्तक और प्रबंध काव्य, दोनों का समावेश है । इनके इतिहास का अनुसंधान करने पर ग्राम-गीतों पर ही आकर ठहरना पड़ता है । इसमें संदेह नहीं कि ग्राम-गीतों से ही काल्पनिक तथा वैचित्र्यपूर्ण कविताओं का विकास हुआ है । यही ग्राम-गीत क्रमश: सभ्य जीवन के अनुक्रम से कला-गीत के रूप में विकसित हो गया है, जिसका संस्कार अब तक वर्तमान है । ग्राम-गीत भी प्रथमत: व्यक्तिगत उच्छ्‌वास और वेदना को लेकर उद्‌गीत किया गया; किंतु इन भावनाओं ने समष्टि का इतना प्रतिनिधित्व किया कि उनकी सारी वैयक्तिक सत्ता समष्टि में ही तिरोहित हो गई और इस प्रकार उसे लोक-गीत की संज्ञा प्राप्त हुई । ग्राम-गीत को कला-गीत के रूप में आते-आते कुछ समय तो लगा ही, पर उसमें सबसे मुख्य बात यह रही कि कला-गीत अपनी रूढ़ियाँ बनाकर चले । कला-गीत का क्षेत्र भी जितना व्यापक तथा विस्तृत हुआ और उसके अनुसार यदि उसमें कुछ हद तक शास्त्रीय रूढ़िप्रियता न रहती, तो उसके समरूपत्व का निर्वाह भी संभव न होता । ग्राम-गीत की रचना में जिस प्रकृति और संकल्प का विधान था, कला-गीत में उसकी उपेक्षा करना समुचित न माना गया । अत्यधिक संस्कृत तथा परिष्कृत होने के बाद भी कला-गीत अपने मूल ग्राम-गीत के संस्कार से कुछ बातों में मुक्ति न पा सका और यह उस समय तक संभव भी नहीं, जब तक मानव-प्रकृति को ही विषय मानकर काव्य रचनाएँ की जाती रहेंगी । ग्राम-गीत से कला-गीत के परिवर्तन में एक बात उल्लेखनीय रही कि ग्राम-गीत में रचना की जो प्रकृति स्त्रैण थी, वह कला-गीत में आकर कुछ पौरुषपूर्ण हो गई । स्त्री और पुरुष रचयिता के दृष्टिकोण में जो सूक्ष्म और स्वाभाविक भेद हो सकता है, वह ग्राम-गीत तथा कला-गीत की अंतर्प्रकृति में बना रहा । ग्राम-गीत में स्त्री की ओर से पुरुष के प्रति प्रेम की जो आसन्नता थी, वह कला-गीत में बहुधा पुरुष के उपक्रम के रूप में परिवर्तित होने लगी ।

राजा-रानी, राजकुमार या राजकुमारी या ऐसे ही समाज के किसी विशिष्ट वर्ग के नायक को लेकर काव्य रचना की जो प्रणाली बहुत प्राचीन काल से चली आ रही थी और जिसका संस्कृत साहित्य में विशेष महत्त्व था, उसका प्रधान कारण यह था कि वैसे विशिष्ट व्यक्तियों के लिए साधारण जनता के हृदय पर उनके महत्त्व की प्रतिष्ठा बनी हुई थी । उनमें धीरोदात्तता, दक्षता, तेजस्विता, रूढ़वंशता, वाग्मिता आदि गुण स्वाभाविक माने जाते थे । मानव होते हुए भी उनकी महत्ता, विशिष्टता, प्रतिष्ठा आदि का प्रभावोत्पादक संस्कार जनता के चित्त पर पड़ा था । ऐसे चरित्र

को लेकर काव्य रचना करने में रसोत्कर्ष का काम, बहुत-कुछ सामाजिक धारणा के बल पर ही, चल जाता था; किंतु साधारण जीवन के चित्रण में कवि की प्रतिभा का बहुत-सा अंश, अपने चरित्र नायक में विशिष्टता प्राप्त कराने की चेष्टा में ही खर्च हो जाता है । ग्राम-गीत की अब यह प्रवृत्ति काव्य-गीत में भी चलने लगी है । एक दुखी भिखारिणी भी हृदय की उच्चता में रानी को मात कर सकती है, इसकी कल्पना तक उस समय हमें न थी । उच्च वर्ग के लोगों के प्रति समाज में विशिष्टता की धारणा ज्यों-ज्यों कम होने लगी, त्यों-त्यों निम्न वर्ग के प्रति हमारे हृदय में आदर का भाव जमने लगा और इस प्रकार काव्य में भी ऐसे पात्रों को सामान्य स्थान प्राप्त होने लगा । हृदय की उच्चता - विशालता किसी में हो, चाहे वह राजा हो या भिखारी, उसका वर्णन करना ही कवि-कर्म है । ग्राम-गीत में दशरथ, राम, कौशल्या, सीता, लक्ष्मण, कृष्ण, यशोदा के नाम बहुत आए हैं और उनसे जन-समाज के बीच संबंध का प्रतिनिधित्व कराया गया है । श्वसुर के लिए दशरथ, पति के लिए राम या कृष्ण, सास के लिए कौशल्या या यशोदा, देवर के लिए लक्ष्मण आदि सर्वमान्य हैं । इसका कारण हमारा वह पिछला संस्कार भी है, जो धार्मिक महाकाव्यों ने हमारे चित्त पर डाला है । एक दरिद्र गृहिणी भी, जिसके घर में भोजन के लिए थोड़ा-सा अन्न है, सोने के ही सूप में फटककर उसे साफ करती है । हमारी दरिद्रता के बीच में भी संपत्तिशालीनता का यह रूप हमारे भाव को उद्दीप्त करने के लिए ही उपस्थित किया गया है । ऐसे वर्णन कला-गीत में चाहे विशेष महत्त्व प्राप्त न करें, किंतु ग्राम-गीत के वे मेरुदण्ड समझे जाते हैं ।

बच्चे अब भी राजा, रानी, राक्षस, भूत, जानवर आदि की कहानियाँ सुनने को ज्यादा उत्कंठित रहते हैं । नानी की कहानियाँ ऐसी ही हुआ करती हैं । साधारण तथा प्रत्यक्ष जीवन में जो घटनाएँ होती रहती हैं, उनके अतिरिक्त जो जीवन से दूर तथा अप्रत्यक्ष हैं, उनके संबंध में कुछ जानने की लालसा तथा उत्कंठा अधिक बनी रहती है । बच्चों की भाँति उन मनुष्यों को भी, जिनका मानसिक विकास नहीं हुआ रहता, वैसी कहानियाँ ज्यादा रुचिकर मालूम होती हैं । ग्राम-गीतों की रचना में ऐसी प्रवृत्ति प्रायः सर्वत्र पाई जाती है । मानव जीवन का पारस्परिक संबंध-सूत्र कुछ ऐसा विचित्र है कि जिस बात को हम एक काल और एक देश में बुरा समझते हैं, उसी बात को दूसरे काल और दूसरे देश में अच्छा मान लेते हैं । जिस वैचित्र्यवाद को हमने अबुद्धिवाद कहकर तिरस्कृत किया, वही पश्चिमी काव्य जगत् में रोमांस के नाम पर फल-फूल कर अपने सौरभ से पूर्व को भी आकर्षित करने लगा ।

प्रेम-दशा जितनी व्यापकत्व-विधायिनी होती है, जीवन में उतनी और कोई स्थिति नहीं । प्रेम या विरह में समस्त प्रकृति के साथ जीवन की जो समरूपता देखी जाती है वह क्रोध, शोक, उत्साह, विस्मय, जुगुप्सा आदि में नहीं । विरहाकुल पुरुष पशु, पक्षी, लता, द्रुम सबसे अपनी वियुक्त प्रिया का पता पूछ सकता है, किंतु क्रुद्ध मनुष्य अपने शत्रु का पता प्रकृति से नहीं पूछता पाया जाता । यही कारण है कि प्रेमिका या प्रेमी प्रकृति के साथ अपने जीवन का जैसा साहचर्य मानते हैं, वैसा और कोई नहीं । मनोविज्ञान का यह तथ्य काव्य में एक प्रणाली के रूप में समाविष्ट

कर लिया गया है । प्रिय के अस्तित्व की सृष्टि-व्यापिनी भावना से जीवन और जगत् की कोई वस्तु अलग नहीं रह सकती । जीवन का यह उत्कर्ष तथा विकास प्रेम-दशा के अतिरिक्त अन्यत्र सुलभ भी नहीं । वृक्ष, लता, पशु, पक्षी जीवन के अनादि सहचर हैं । प्रकृति का यह साहचर्य अब सभ्य जीवन से बहुत दूर हट गया है, लेकिन गमले के पौधों और पिंजड़े के पक्षियों का साथ शायद नहीं छूट सकेगा । अपने सुख-दुख के भावों को उनपर आरोपित कर, हम उन्हें स्पंदित करते ही रहते हैं । काव्य में भी जीवन की ऐसी व्यापकता के अभाव में मानो हम विह्वल-से बने रह जाते हैं । प्राण-भक्षक को भी रक्षक समझने की शक्ति प्रेम में ही है ।

ग्राम-गीतों में ऐसे वर्णन बहुत हैं, जहाँ नायिका अपने प्रेमी की खोज में बाघ, भालू, साँप आदि से उसका पता पूछती चलती है । आदिकवि वाल्मीकि ने विरह-विह्वल राम के मुख से सीता की खोज के लिए न जाने कितने पशु-पक्षी, लता-द्रुम आदि से पता पुछवाया है । इसके अतिरिक्त सीता के अनुसंधान तथा उनके पास राम का प्रणय-संदेश पहुँचाने के लिए, जो हनुमान को दूत बनाकर तैयार किया, वह काव्य में इस परिपाटी का मार्ग-दर्शक ही हो गया । इसके उपरांत मेघदूत, पवनदूत, हंसदूत, भ्रमरदूत आदि न मालूम, कितने दूत प्रेम-संभार के लिए आ धमके । अब तो वैज्ञानिक युग में टेलीफोन, टेलीग्राफ, रेडियो आदि यंत्र दूत बने ही, पोस्टमैन को भी यह मर्यादा मिलनी चाहिए । कला-गीतों में पशु, पक्षी, लता-द्रुम आदि से जो प्रश्न पूछे गए हैं, उनके उत्तर में वे प्रायः मौन रहे हैं । विरही यक्ष का मेघदूत भी मौन ही रहा है, किंतु ग्राम-गीत का दूत मौन नहीं रहा है ।

♦ ♦ ♦

अभ्यास

पाठ के साथ

1. 'ग्राम-गीत का मर्म' निबंध में व्यक्त सुधांशु जी के विचारों को सार रूप में प्रस्तुत करें ।
2. जीवन का आरंभ जैसे शैशव है, वैसे ही कला-गीत का ग्राम-गीत है । लेखक के इस कथन का क्या आशय है ?
3. गार्हस्थ्य कर्म-विधान में स्त्रियाँ किस तरह के गीत गाती हैं ?
4. मानव जीवन में ग्राम-गीतों का क्या महत्त्व है ?
5. ''ग्राम-गीत हृदय की वाणी है, मस्तिष्क की ध्वनि नहीं ।'' -आशय स्पष्ट करें ।
6. ग्राम-गीत की प्रकृति क्या है ?
7. कला-गीत और ग्राम-गीत में क्या अंतर है ?

8. 'ग्राम-गीत का ही विकास कला-गीत में हुआ है ।' पठित निबंध को ध्यान में रखते हुए उसकी विकास-प्रक्रिया पर प्रकाश डालें ।
9. ग्राम-गीतों में प्रेम-दशा की क्या स्थिति है ? पठित निबंध के आधार पर उदाहरण देते हुए समझाइए ।
10. 'प्रेम या विरह में समस्त प्रकृति के साथ जीवन की जो समरूपता देखी जाती है, वह क्रोध, शोक, विस्मय, उत्साह, जुगुप्सा आदि में नहीं ।' - आशय स्पष्ट करें ।
11. ग्राम-गीतों में मानव जीवन के किन प्राथमिक चित्रों के दर्शन होते हैं ?
12. गीत का उपयोग जीवन के महत्त्वपूर्ण समाधान के अतिरिक्त साधारण मनोरंजन भी है । निबंधकार ने ऐसा क्यों कहा है ?
13. ग्राम-गीतों के मुख्य विषय क्या हैं ? निबंध के आधार पर उत्तर दें ।
14. किसी विशिष्ट वर्ग के नायक को लेकर जो काव्य रचना की जाती थी । किन स्वाभाविक गुणों के कारण साधारण जनता के हृदय पर उनके महत्त्व की प्रतिष्ठा बनती थी ?
15. ग्राम-गीत की कौन-सी प्रवृत्ति अब काव्य-गीत में भी चलने लगी है ?
16. ग्राम-गीत के मेरुदंड क्या हैं ?
17. 'प्रेम-दशा जितनी व्यापक विधायिनी होती है, जीवन में उतनी और कोई स्थिति नहीं ।' प्रेम के इस स्वरूप पर विचार करें तथा आशय स्पष्ट करें ।
18. 'कला-गीतों में पशु-पक्षी, लता-द्रुम आदि से जो प्रश्न पूछे गए हैं, उनके उत्तर में वे प्रायः मौन रहे हैं । विरही यक्ष का मेघदूत भी मौन ही रहा है ।' लेखक के इस कथन से क्या आप सहमत हैं ? यदि हैं तो अपने विचार दें ।
19. 'ग्राम-गीत का मर्म' निबंध के इस शीर्षक में लेखक ने 'मर्म' शब्द का प्रयोग क्यों किया है ? विचार कीजिए ।

पाठ के आस-पास

1. ग्राम-गीतों से ही काल्पनिक तथा वैचित्र्यपूर्ण कविताओं का विकास हुआ है ? ऐसी कोई कविता बताइए जिसका निकटतर संबंध ग्राम-गीतों से हो ।
2. कला-गीत के अंतर्गत मुक्तक और प्रबंध काव्य को समाविष्ट किया गया है । अपने शिक्षक से मुक्तक तथा प्रबंध काव्य के बारे में जानकारी प्राप्त करें ।
3. लक्ष्मीनारायण सुधांशु बिहार विधान सभा के सभापति रहे हैं । उनके राजनीतिक जीवन की जानकारी प्राप्त कीजिए ।
4. सुधांशु जी बिहार के एक प्रमुख लेखक थे । राजनीति और सामाजिक कर्म के अतिरिक्त उन्होंने कई पत्रिकाएँ भी निकालीं और संस्थाएँ भी स्थापित कीं । इस विषय में अपने शिक्षक से चर्चा करते हुए सुधांशु जी पर एक निबंध तैयार कीजिए ।
5. यह निबंध आपको कैसा लगा ? इसके महत्त्व पर वर्ग में एक संगोष्ठी आयोजित कर अपने विचार दें या इस निबंध के संबंध में अपने विचार स्वतंत्र पन्ने पर लिखकर अपने शिक्षक से दिखाएँ ।
6. गाँवों में महिलाओं द्वारा विभिन्न सांस्कृतिक अवसर पर संस्कार गीत गाए जाते हैं ? ये गीत आपके मन पर कैसा प्रभाव छोड़ते हैं ? बताएँ ।

7. आप अपने अनुभव के आधार पर कुछ ग्राम-गीत एकत्र कर विद्यालय की गोष्ठी में उनका पाठ कीजिए ।

भाषा की बात

1. निम्नलिखित शब्दों के प्रत्यय बताएँ –
   रमणीय, शुद्धता, जातीय, प्रधानता, पुरुषत्व, मार्मिकता, बर्ताव, अपूर्वता, स्वाभाविक, वर्तमान, प्रतिनिधित्व, शास्त्रीय, मधुरता
2. निम्नलिखित शब्दों के उपसर्ग बताएँ –
   अपूर्व, अभिप्राय, परिश्रम, अतिरिक्त, उपलक्ष्य, अनुसंधान, विशिष्टता
3. समास-विग्रह करें –
   उत्तरोत्तर, अटूट, पुरुषोत्तम, राजकुमार, राजा-रानी, संस्कारवश, ग्राम्यगीत, सास-श्वसुर, दशरथ, फल-फूल, मनोविज्ञान
4. संधि-विच्छेद करें –
   उल्लास, संस्कृति, उद्दीप्त, समाविष्ट, उच्छ्वास, उद्‌गीत
5. निम्नलिखित विशेषणों से संज्ञा बनाएँ –
   स्त्रैण, दरिद्र, पारस्परिक, शास्त्रीय
6. पाठ से कारक के परसर्ग रहित एवं परसर्ग सहित उदाहरण चुनें और कारक का रूप स्पष्ट करें ।
7. अर्थ की दृष्टि से वाक्यों की प्रकृति बताएँ –
   (क) कितनी दूर तक जा सका है ?
   (ख) क्या जीवन का आरंभ शैशव है ?
   (ग) कला-गीत में उनकी उपेक्षा करना समुचित न माना गया ।
   (घ) विरही यक्ष का मेघ-दूत भी मौन ही रहा है, किंतु ग्राम-गीत का दूत मौन नहीं रहा है ।

शब्द निधि :

दंतकथा	:	वह लोकप्रचलित कथा जिसका कोई तथ्यपूर्ण पुस्तकीय आधार न हो
संहति	:	समुच्चय, एकत्र होना
आलोचन	:	गुणदोष मूल्यांकन
परवशता	:	अन्य के वश में होना, पराश्रितता
प्रत्युत	:	बल्कि
परवर्ती	:	बाद का
आशु कवित्व	:	तुरंत कविता रच देने की क्षमता
स्त्रैण	:	स्त्री प्रकृति से युक्त
उद्‌भावना	:	सृजन, उत्पन्न होना या करना
वैयक्तिक	:	व्यक्तिगत
अन्तर्निहित	:	समाहित, छिपा हुआ
अपूर्वता	:	अतिविशिष्टता, विलक्षणता
वैचित्र्यपूर्ण	:	विचित्रता से परिपूर्ण, विशेष कलात्मक

उच्छ्वास	:	विषादपूर्ण अभिव्यक्ति, आह
वेदना	:	दुख, पीड़ा
उद्‌गीत	:	ऊँचे स्वर में गाया हुआ
समष्टि	:	समूह, सबकुछ के एक साथ होने का भाव
तिरोहित	:	लुप्त
समरूपत्व	:	रूपगत समानता
परिष्कृत	:	शुद्ध किया हुआ, स्वच्छता से युक्त
आसन्नता	:	निकटता
दक्षता	:	निपुणता, कुशलता
तेजस्विता	:	प्रखरता, तेज से युक्तता
रूढ़वंशता	:	वंश की पारंपरिकता यानी खानदानी रूढ़िवादिता, कुलीनता
वाग्मिता	:	वक्तृत्व की कुशलता, वाणी की समृद्धि
रसोत्कर्ष	:	रसात्मकता की परिपूर्णता
संपत्तिशालीनता	:	संपत्ति से पैदा हुई शालीनता, समृद्धिजन्य शालीनता
उद्दीप्त	:	जाग्रत
मेरुदंड	:	रीढ़ की हड्डी
उत्कंठित	:	उत्सुक
विस्मय	:	आश्चर्य
जुगुप्सा	:	घृणा
द्रुम	:	वृक्ष
वियुक्त	:	अलग
साहचर्य	:	साथ होना, सहचरता
अनादि सहचर	:	शाश्वत साथी
प्रेम-संभार	:	प्रेम और उससे जुड़े हुए अन्य भाव